5

पाठ्यक्रम में भाषा
भारतीय संदर्भ

नंदनी*

प्राणी समूह आपस में विचारों एवं भावों के आदान-प्रदान के लिए जिन संकेतों तथा ध्वनि समूहों का प्रयोग करते हैं वही उस समूह की भाषा या अभिव्यक्ति का माध्यम है। उसी प्रकार से पाठ्यक्रम के भी संदर्भ में भाषा का महत्व है, यह अध्ययनकर्ता तथा अध्यापक के विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम बनती है। विगत कुछ वर्षों में देखा जा रहा है कि महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयी स्तरों पर शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के अंतर्गत पाठ्यक्रम में भाषा के महत्व पर विशेष बल दिया जा रहा है। जिससे भावी शिक्षक इसके महत्त्व को समझ सकें। साथ ही इतिहास, गणित तथा विज्ञान जैसे विषय, विषय मात्र ना होकर जिन भाषाओं अथवा जिन माध्यमों में शिक्षण कार्य किया जा रहा हो, उसमें विद्यार्थी की दक्षता विकसित करें। इसके अतिरिक्त पाठ्यक्रम के माध्यम से मातृभाषा के अतिरिक्त अन्य भारतीय भाषाओं तथा अंतर्राष्ट्रीय भाषा का उचित ज्ञान देना। पाठ्यक्रम के विकास में भाषा शिक्षक तथा विद्यार्थी के लिए बाधक ना होकर साधक का कार्य करे। भाषा-शिक्षण केवल पाठ्यपुस्तकों के दायरे तक सीमित न होकर विभिन्न क्रियाकलापों के माध्यम से शिक्षार्थी तक पहुँचे।

भाषा का ध्येय विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास होना चाहिए जिसके अंतर्गत उसके सभी कौशलों का विकास हो, चाहे वह भाषा-कौशल हो अथवा श्रवण-कौशल। पाठ्यक्रम के माध्यम से भाषा को वह आधारभूमि प्राप्त होनी चाहिए जिसके माध्यम से शिक्षण-कार्य एकतरफा ना होकर शिक्षक तथा शिक्षार्थी दोनों के लिए कुछ नया सीखने तथा सिखाने का माध्यम बने। पाठ्यपुस्तकों की भाषा तथा विद्यार्थियों की आसपास की भाषा में सामंजस्य स्थापित कर सके। विभिन्न महाविद्यालयों में एम.एड. तथा बी.एड. के पाठ्यक्रमों में 'पाठ्यक्रम में भाषा' विषय के पाठ्यक्रम का अध्ययन तथा राज्य स्तर पर विद्यालयों में प्रयुक्त पाठ्यक्रम का भाषा के संदर्भ में अध्ययन करना इस प्रपत्र का ध्येय है। यहाँ यथासंभव आँकड़ों, तथ्यों तथा शिक्षाविदों के विभिन्न मतों का विश्लेषण किया गया है। अतः यह एक तथ्यात्मक

* *शोधार्थी*, जामिया मिलिया इस्लामिया यूनिवर्सिटी, नयी दिल्ली

एवं विश्लेष्णात्मक प्रपत्र होगा। जिसके माध्यम से हम विचारों का आदान-प्रदान करते हैं अथवा भावाभिव्यक्ति माध्यम के रूप में जिन संकेतों तथा ध्वनियों का प्रयोग करते हैं उसे भाषा के रूप में परिभाषित करते हैं। हर प्राणी समूह की अपनी भाषा होती है जिससे वे अपनी भावाभिव्यक्ति करते हैं। उसी प्रकार से मानव भी अनेक भाषाओं के माध्यम से विचार-विमर्श करते हैं। ये भाषाएँ भोगौलिक, सामाजिक तथा पारिस्थितिक आधार पर भिन्न-भिन्न होती हैं। भाषाई आधार पर विश्व में कई देशों का निर्माण भी हुआ है। कभी-कभी कुछ स्थानों पर भाषा राजनैतिक तथा सामाजिक वर्चस्व का कारण भी बन जाती है।

भारत के परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो भाषा की स्थिति भिन्न है। यहाँ पर एक कहावत प्रसिद्ध है —

कोस-कोस पर बदले पानी
चार कोस पर बदले बानी

भारत में लगभग 1652 भाषाएँ बोली जाती हैं जो पाँच भारतीय भाषा परिवारों से आती हैं। इन भाषाई विविधताओं का प्रत्यक्ष प्रभाव शिक्षा, शिक्षा कार्यक्रम तथा शिक्षा माध्यम पर पड़ता है। शिक्षण माध्यम में भाषा एक महत्त्वपूर्ण साधन होती है जो शिक्षण कार्य को सहज, सुगम तथा प्रभावी बनाती है। कक्षाकक्ष में जब भाषांतर होता है तब विद्यार्थी के लिए अधिगम कठिन हो जाता है। इसलिए ज़रूरी है कि अध्येता तथा अध्ययनकर्ता की भाषा में तारतम्यता हो। इसके लिए आवश्यक है कि पाठ्यक्रम का निर्माण इस तरह से किया जाए जिससे कि भाषाई विभिन्नता अधिगम में बाधक न बन सके। पाठ्यक्रम का दायरा सिर्फ़ पाठ्यपुस्तक तक संकुचित न होकर रहे। उसे विद्यालय में अधिगम तथा कौशल विकास की गतिविधियों, प्रयोग तथा विभिन्न क्रियाकलापों के संदर्भ में देखा जाना चाहिए, इसी आशय की पुष्टि *एन.सी.एफ़. 2005* भी करता है। वह शिक्षण को पाठ्यपुस्तक के दायरे से आगे कर उसे आसपास के वातावरण तथा परिवेश की विषय-वस्तु से जोड़ने की बात करता है। इस क्रम में भाषा की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है।

भाषा शिक्षण का कार्य विभिन्न भाषाओं के पाठ्यपुस्तक तक ही केन्द्रित ना होकर भाषेत्तर विषयों में भी है। इसके महत्त्व पर ध्यान देते हुए ही 'पाठ्यक्रम में भाषा' को शिक्षक शिक्षण कार्यकमों में सम्मिलित किया गया है। जब तक शिक्षक इसकी उपयोगिता को नहीं जानेंगे तब तक वह भविष्य में अपने शिक्षण कार्य में इसे उचित प्रकार से प्रयोग नहीं कर सकेंगे। विभिन्न विश्वविद्यालयों ने 'पाठ्यक्रम में भाषा' को अपने पाठ्यक्रम में इस प्रकार रेखांकित किया है, ताकि भावी शिक्षकों को भाषा तथा उसके सहसंबंध स्पष्ट हो सकें तथा वे भविष्य में पाठ्यपुस्तक की भाषा तथा विद्यार्थियों की बोलचाल की भाषा में तारतम्यता स्थापित करते हुए विद्यार्थियों के भाषिक ज्ञान को समृद्ध करें।

पाठ्यपुस्तक में प्रयुक्त भाषा किसी अन्य भाषा का रूपांतरण न होकर विद्यार्थी की मातृभाषा के अनुकूल हो या फिर ऐसी भाषा का प्रयोग किया जाए जो उनकी मातृभाषा के करीब हो। लेकिन इस क्रम में भाषा की भाषाई गुणवत्ता से समझौता भी न हो। अध्ययन के क्रम में यह भी देखा गया है कि जो

विद्यार्थी अपनी मातृभाषा में आठ वर्ष तक शिक्षा ग्रहण करते हैं वे उसे स्पष्ट रूप से बोल तो सकते हैं, लेकिन पढ़ने तथा लिखने में असमर्थ होते हैं।

भाषा व्याकरण के नियमों से बंधी संरचना मात्र नहीं है, इसका फलक उससे भी विस्तृत है। भाषा भावों विचारों को अभिव्यक्त करने का माध्यम है। कई स्थान ऐसे आते हैं जब हम भाषा के व्याकरणिक नियमों का पालन नहीं करते, किंतु फिर भी उसे भाषा की संज्ञा दी जाती है। जहाँ विभिन्न सार्थक ध्वनि समूहों के माध्यम से भावाभिव्यक्ति हो, वही भाषा है। प्लेटो ने *सोफिस्ट* में विचार और भाषा के संबंध में लिखते हुए कहा है कि विचार और भाषा में थोड़ा ही अंतर है। "विचार आत्मा की मूक या अध्वन्यात्मक बातचीत है पर वही जब ध्वन्यात्मक होकर होंठो पर प्रकट होती है तो उसे भाषा की संज्ञा देते हैं।" (तिवारी 2005) विचार विनिमय के क्रम में जिन ध्वनि समूहों का हम प्रयोग करते हैं वह सार्थक हो यह भी आवश्यक है। अर्थहीन शब्दों के समूह को हम भाषा की संरचना में नहीं रख सकते। व्याकरण की अवहेलना को स्वीकार किया जा सकता है। जैसे 'वह जाता है' को 'जाता है वह' बोला जा सकता है जबकि यहाँ हिंदी भाषा के पदक्रम का पालन नहीं हो रहा है। व्याकरण की दृष्टि से यह अशुद्ध वाक्य संरचना है, लेकिन हिंदी भाषा की दृष्टि से सार्थक ध्वनि समूह है। साथ ही यह वक्ता के विचारों को स्पष्ट भी करता है।

भाषा सीखने का कार्य जीवनपर्यन्त चलता रहता है। व्यक्ति इसे अपने आसपास के वातावरण अथवा समाज को समझने और समझाने के क्रम में सीखता रहता है। साथ ही उसे ज़रूरत के अनुसार बदलता भी रहता है। भाषा को अर्जित किया जा सकता है जितना ही व्यक्ति उसे जानने समझने की कोशिश करता है उतना ही उसकी भाषा समृद्ध होती जाती है, इस समृद्धि का माध्यम समाज तथा साहित्य मुख्य रूप से बनते हैं। राष्ट्रीय फ़ोकस समूह-आधार पत्र 'भारतीय भाषाओं का शिक्षण' में औरोरिन का कथन है "भाषा का अस्तित्व एवं विकास समाज के बाहर नहीं हो सकता। भाषा का विकास हमारी सांस्कृतिक विरासत और सामाजिक विकास की ज़रूरतों से ही उद्दीप्त होता है, लेकिन इसके विपरीत यह भी उतना ही सच है कि भाषा भी उद्दीपन करने वाली इन कारकों को उद्दीप्त करती है। मानव समाज भाषा के बिना नहीं चल सकता क्योंकि यह संप्रेषण का सबसे ज़्यादा शुद्ध और सार्वभौमिक माध्यम है। यह विचारों के निर्माण और अभिव्यक्ति को बनाने और संचारित करने की ज़रूरी भूमिका निभाता है।"

शिक्षा के सभी कार्य जैसे कि पढ़ना, लिखना, समझना तथा समझाना आदि भाषा के द्वारा ही संपादित होते हैं। चाहे वह औपचारिक शिक्षा हो या अनौपचारिक, दोनों ही माध्यम में भाषा की महत्वपूर्ण भूमिका है। भाषा के बिना शिक्षण कार्य को संपादित किया ही नहीं जा सकता। इसी संदर्भ में शिक्षा में भाषा का महत्त्व बढ़ जाता है। शिक्षाशास्त्रियों पर एक बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी होती है कि वह शिक्षार्थी को उचित भाषा ज्ञान प्रदान करें। शिक्षक का दायित्व है कि जिस भाषिक ज्ञान के साथ विद्यार्थी विद्यालय में प्रवेश करता है वह उसके उस ज्ञान को और समृद्ध करे। साथ ही उसके भाषिक दोष का निवारण भी करे। विद्यार्थी जब प्राथमिक कक्षा में प्रवेश करता है तो उसके पास उसके

घरेलू तथा आसपास की भाषा का एक वृहत भंडार होता है। इस संदर्भ में चोम्स्की का कथन है कि 'एक बच्चा एक सामान्य भाषाई जगत से संपर्क के अतिरिक्त अंतर्निहित भाषाई क्षमता के साथ ही जन्म लेता है।' तो यहाँ आवश्यक है कि बच्चे की अंतर्निहित भाषाई क्षमता का समुचित रूप से उचित दिशा में प्रयोग किया जाए। छोटे बच्चे में ग्रहणशीलता अधिक होती है वह आसानी से अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त भी अन्य भाषाओं को सीखने में सक्षम होते हैं। भारतीय संदर्भ में देखा जाए तो भारत के अधिकांश विद्यार्थी विद्यालय में प्रवेश लेने से पूर्व ही एक से अधिक भाषाओं का ज्ञान रखते हैं। कुछ क्षेत्रों में ऐसा भी देखा गया है कि उनके घर की भाषा अलग होती है, आसपास की दूसरी तथा प्रशासनिक एवं राजकाज की भाषा अलग। इस क्रम में वह तीन भाषाओं का ज्ञान रखता है जिसमें पहली भाषा में उसकी भाषिक ज्ञान क्षमता अधिक होगी। उसे विद्यालय में पर्याप्त अवसर मिले तो वह नई भाषा अथवा तीसरी भाषा को आसानी से सीख सकेगा। इसके लिए आवश्यक है 'शिक्षण का फ़ोकस व्याकरण पर न होकर विषय-वस्तु पर होना चाहिए।' जब विद्यार्थी विषय-वस्तु को समुचित ढंग से समझ लेता है तब वह उससे संबंधित व्याकरण नियमों से भी परिचित हो जाता है। औपचारिक तथा विद्यालयी भाषा शिक्षण के संदर्भ में उसकी पाठ्यचर्या महत्त्वपूर्ण हो जाती है। पाठ्यचर्या की संरचना पर भी विद्यार्थी का भाषिक ज्ञान निर्भर करता है। *पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005* के अनुसार एक ऐसी योजना जो व्यक्ति और समाज के शैक्षणिक लक्ष्यों की व्याख्या करे जिससे समझ बने कि स्कूलों में बच्चों को किस प्रकार के अधिगम के अनुभव दिए जाएँ। पाठ्यचर्या बोध प्रश्न करता है कि जिस शिक्षा प्रणाली को अपनाया गया है उसमें शिक्षा के उद्देश्य क्या हैं? वह किस प्रकार का ज्ञान शिक्षार्थी को देना चाहता है? इन सब प्रश्नों के उत्तर पाठ्यचर्या के माध्यम से प्राप्त होते हैं। साथ ही लागू शिक्षा नीति के मानकों और लक्ष्यों का भी ज्ञान पाठ्यचर्या के माध्यम से ही होता है। यह एक व्यापक भाव भूमि है जिसमें औपचारिक शिक्षा से जुड़े क्रियाकलाप आते हैं। इसके माध्यम से ही विद्यालयों की स्वायत्ता को निर्धारित किया जा सकता है। यह एक विस्तृत क्षेत्र है इसके अंतर्गत ही पाठ्यक्रम आता है। पाठ्यक्रम का अर्थ है 'विषयवस्तु के हिसाब से क्या पढ़ाया जाए और वो ज्ञान कौशल एवं अभिवृत्तियाँ जिन्हें खास रूप से बढ़ावा मिले, स्तर विशिष्ट उद्देश्यों के साथ।' पाठ्यक्रम कक्षा के अनुसार विषयों पर केंद्रित होता है। किस विषय में कितने विषयवस्तु की जानकारी देनी है। उसका भाषा स्तर क्या होगा? वहाँ पाठ के अंत में किस तरह के प्रश्न होंगे? तथा किस प्रकार के क्रियाकलाप होंगे? इन सभी का निर्धारण पाठ्यक्रम के माध्यम से ही होता है। यह विद्यार्थी के अधिगम को सुगम बनाने की योजना है। यह बताता है कि किस तरह का अधिगम विद्यार्थी के लिए आवश्यक है साथ ही यह भी कि किन शैक्षणिक उद्देश्यों की पूर्ति इनके माध्यम से होती है। अर्थात् पाठ्यक्रम निश्चित क्रम के शैक्षणिक उद्देश्यों को प्राप्त करने की योजना है। इसी के दिशा निर्देशों के माध्यम से एक शिक्षक अपने शैक्षणिक उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास करता है।

पाठ्यक्रम के अंतर्गत किस प्रकार की भाषा को लेकर योजना बनाई गयी है इसी के माध्यम से

पाठ्यक्रम में भाषा का महत्त्व रेखांकित होता है। इसलिए आवश्यक है कि पाठ्यक्रम के अंतर्गत भाषा को केवल भाषा शिक्षण तक ही सीमित न रख कर उसे विभिन्न विषयों तक विस्तारित किया जाए। पाठ्यक्रम के माध्यम से विषयवस्तु की मात्रा, स्वरूप तथा स्तर को निर्धारित किया जाता है। इसके निर्धारण का अधिकार क्षेत्रीय संस्थाओं, राज्य-सरकारों तथा निजी विद्यालयों को होता है। वे अपनी शैक्षिक ज़रूरतों तथा उद्देश्यों के अनुरूप पाठ्यक्रम का निर्धारण करते हैं। इसमें कहीं ना कहीं भाषा की गुणवत्ता को दरकिनार कर दिया जाता है। भाषा के माध्यम से ही शिक्षण कार्य होता है, ये माध्यम भाषा शैक्षणिक संस्थाओं के प्राथमिकता पर निर्भर करता है। भारत के संदर्भ में अंग्रेज़ी, हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं को माध्यम भाषा के रूप प्रयोग किया जाता है कुल मिलकर देश में 47 भाषाओं में पठन-पाठन का कार्य होता है। इन शिक्षण माध्यमों को केवल माध्यम मात्र के रूप में ही देखा जाता है न कि एक भाषा के रूप में। भाषाई खामियों को तो नज़रअंदाज किया ही जाता है साथ ही माध्यम भाषा की विशिष्टता को भी दरकिनार किया जाता है और ध्यान केवल विषय-वस्तु को उद्घाटित करने में होता है। हर विषय की एक विशिष्ट शब्दावली होती है, जिसका प्रयोग उसी विषय में प्रमुखता से होता है। जब तक उन शब्दावलियों को विद्यार्थी समझ नहीं लेता तब तक उस विषय की समझ अधूरी रहती है। अतः आवश्यक है कि शिक्षक उन विशिष्ट शब्दावलियों को विद्यार्थी के समक्ष स्पष्ट करे। उन शब्दावलियों को समझने के लिए विद्याथियों की मातृभाषा का प्रयोग करना ही उचित रहता है, क्योंकि इससे वे उन शब्दावलियों को अच्छी तरह से समझ सकेंगे। साथ ही उनकी परिभाषा को अपने शब्दों में परिभाषित भी कर सकेंगे। शिक्षा के प्रयोगात्मक उद्देश्य की पूर्ति भी तभी होगी जब विद्यार्थी उसे समझ कर उसे अपने शब्दों में परिभाषित कर देगा। ये तभी संभव है जब उसकी समझ हो तथा उसे व्यक्त करने की शब्द-क्षमता उसे उचित भाषा ज्ञान के माध्यम से उपलब्ध कराई जाएगी।

भाषा के महत्त्व को पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रम में तभी रेखांकित किया जा सकता है जब इसकी महत्ता को शिक्षाविद तथा शिक्षक समझें। इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए दो वर्षीय बी.एड. कार्यक्रम में एन.सी.टी.ई. के पाठ्यचर्या फ्रेमवर्क के सुझावानुसार अन्य विश्वविद्यालयों ने भी पाठ्यक्रम में भाषा शिक्षा को पाठ्यचर्या के अंतगर्त शमिल किया है। जिससे भावी शिक्षक भाषा से जुड़ी विभिन्न धारणाओं, अवधारणाओं तथा भाषाविदों के मंतव्य को अच्छी तरह से समझ सकें। साथ ही भाषा के विभिन्न पक्षों से वे भी अवगत हों जो 'भाषा शिक्षक' नहीं बनने जा रहे हैं। एन.सी.टी.ई. इस संबंध में कहता है कि भारत के संदर्भ में भाषा तथा साक्षरता को आमतौर पर भाषा शिक्षकों से ही जोड़ कर देखा जाता है। चाहे कोई भी विषय हो उसे भाषा से मुक्त करके नहीं पढ़ाया जा सकता। विद्यार्थियों की भाषाई तथा शैक्षिक पृष्ठभूमि, उनकी कक्षाकक्ष भागीदारी, शैक्षणिक निर्णय तथा उनकी शिक्षण प्रक्रियाओं को प्रभावित करती है। यह आवश्यक है कि उनकी भाषिक पृष्ठभूमि को समझा जाए तथा उसे किस तरह से मौखिक तथा लिखित रूप में उसका सर्वश्रेष्ठ प्रयोग विषय-वस्तु को समझने

के क्रम में हो। अतः आवश्यक है कि भावी शिक्षक इसके सैद्धांतिक विषयों को अच्छी तरह से जान सकें तथा वर्तमान विद्यालयी गतिविधियों का समुचित विश्लेषण करने की क्षमता उनमें हो। साथ ही भविष्य में उसके उपयुक्त विकल्प ढूँढ़ने में सक्षम हों। कई अध्ययनों से यह पता चलता है कि भारतीय विद्यार्थी गद्यांश पढ़ने में भी सक्षम नहीं हैं। यह अपने आप में सभी शिक्षकों के लिए विचारणीय विषय है।

यह कोर्स मुख्यतः तीन व्यापक बिंदुओं पर आधारित है—

1. विद्यार्थियों की भाषिक पृष्ठभूमि को समझते हुए विषय शिक्षण के समय प्रथम तथा द्वितीय माध्यम भाषा का प्रयोग। कक्षा में भाषिक विविधता को ध्यान में रखते हुए उसके प्रति संवेदनशील होना आवश्यक है।
2. कक्षाकक्ष के वातावरण को समझते हुए एक कार्ययोजना का विकास, जो कक्षाकक्ष की विषय-वस्तु को पढ़ने में मौखिक विकास को प्रोत्साहित करे।
3. पाठ्य विषय के गद्यांश पठन की प्रवृत्ति को समझना। अलग-अलग विषयवस्तुओं की लिखित सामग्रियों की समानता तथा विविधता को भी ध्यान में रखना आवश्यक है।

इन बिंदुओं तथा सुझावों को ध्यान में रखकर विश्वविद्यालयों ने जो पाठ्यक्रम निश्चित किया है उसमें भाषा, भाषा की प्रवृत्ति, उसकी उपयोगिता, सार्थक प्रयोग के साथ शिक्षा शास्त्रियों के सिद्धांतों को भी सम्मिलित किया गया, जिससे शिक्षार्थी भाषा का समालोचनात्मक विश्लेषण कर सकें। पाठ्यक्रम के साथ सह-संबंध के साथ ही बहुभाषिकता को भी स्थान दिया गया है। भारतीय परिवेश को ध्यान में रखकर मातृभाषा को भी पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया गया है। जिससे कि भावी शिक्षक पाठ्यपुस्तकों की भाषा तथा विद्यार्थियों की भाषा में तारतम्यता स्थापित कर सकें। इसके अतिरिक्त विद्यार्थियों में होने वाली भाषिक त्रुटियों को दूर किया जा सके।

विद्यालयों में प्रयुक्त होने वाली पाठ्यपुस्तकों का निर्माण कार्य राष्ट्रीय स्तर पर मुख्य रूप से एन.सी.ई.आर.टी. करती है, जबकि राज्य स्तर पर उस राज्य से संबंधित एस.सी.ई.आर.टी.। इसके अतिरिक्त निजी शैक्षणिक संस्थाओं में उनके पाठ्यक्रम के अनुसार पाठ्यपुस्तकों का प्रयोग किया जाता है। इन सभी पाठ्यपुस्तकों में समान स्तर होते हुए भी काफ़ी विभिन्नताएँ होती हैं। पाठ्यपुस्तकों का निर्माण हिंदी, अंग्रेज़ी के अतिरिक्त अन्य भारतीय भाषाओं में भी होता है। 'किसी कक्षाकक्ष के लिए कोई भी पाठ्यपुस्तक आदर्श नहीं हो सकती। यह शिक्षक का दायित्व है कि वह सीखने वाले और सामग्री के बीच संतुलन बनाए रखे और उसके लिए ज़रूरी है कि उसमें सामग्री के निर्माण से लेकर उपलब्ध सामग्री तक को बच्चों के स्तर के अनुरूप ढालने की क्षमता हो।' शिक्षक पाठ्यपुस्तक तथा बच्चों के भाषिक स्तर से परिचित होता है, इसलिए उसकी भूमिका महत्त्वपूर्ण हो जाती है। शिक्षक दोनों के बीच सामंजस्य स्थापित करने का कार्य करता है। कक्षाकक्ष भाषा विद्यालय के वातावरण, विद्यार्थी की मातृभाषा तथा उनके बोल-चाल की भाषा के बीच संबंध बनाने के लिए आवश्यक है। जिन पाठ्यपुस्तकों का प्रयोग विद्यालयों में किया जाता है वह उसके आसपास की संस्कृति,

भाषा तथा वातावरण से जुड़ा हो न कि अनुदित हो। अनुदित पाठ्यपुस्तक बच्चों के अधिगम में बहुत बड़ी बाधक होती हैं, क्योंकि वे स्थानीय परिवेश से जुड़ी नहीं होतीं। उनमें प्रयुक्त उदाहरण के साथ बच्चे तारतम्यता नहीं बैठा पाते हैं। इस क्रम में सबसे अधिक समस्याओं का सामना पिछड़े वर्ग के बच्चों को करना पड़ता है। पाठ्यपुस्तक में उल्लेखित भाषा तथा उनकी संस्कृति में बहुत ही अंतर होता है इसलिए ज़रूरी है कि इस तथ्य को ध्यान में रखकर पाठ्यपुस्तक का निर्माण कार्य हो। लेकिन इस क्रम में उनकी भाषिक गुणवत्ता के साथ कोई छेड़छाड़ न हो। वाक्य विन्यास, शब्द संरचना का यथासंभव ध्यान दिया जाए।

भाषा का महत्त्व शिक्षा के क्षेत्र में अत्यधिक है। भाषा के बिना शिक्षण कार्य की कल्पना हम कर ही नहीं सकते हैं। इसलिए आवश्यक है कि उसकी भाषा की महत्ता को पाठ्यक्रम में स्वीकार करते हुए इस तरह की एक समझ विकसित करें जहाँ कक्षाकक्ष में भाषा केवल भाषा की कक्षा तक ही सीमित हो कर न रह जाए, अपितु इसका विस्तार अन्य विषयों जैसे गणित, सामाजिक विज्ञान आदि की कक्षाओं में भी हो। इन सभी विषयों की अपनी एक विशिष्ट भाषिक संरचना होती है अतः शिक्षक का दायित्व है वह उस संरचना को इस प्रकार से विद्यार्थी को समझाएँ कि वे इसे अपनी बोलचाल की भाषा में भी परिभाषित कर सकें। यदि सभी कक्षाओं में भाषिक ज्ञान को महत्त्व दिया जाने लगे तो विद्यार्थी की बोलने लिखने में होने वाली गलतियाँ सुधरेंगी। साथ ही वे गद्यांशों-पद्यांशों को पढ़ने तथा समझने में भी सक्षम होंगे। एक कक्षाकक्ष में विद्यार्थी किसी निश्चित भाषा क्षेत्र के ही हों यह आवश्यक नहीं है इस बात को ध्यान में रखते हुए शिक्षक को शिक्षण कार्य संपादित करना चाहिए। साथ ही प्राथमिक स्तर से ही सभी क्षेत्रों में शिक्षण माध्यम की भाषा के साथ ही मातृभाषा एवं संपर्क भाषा का उचित ज्ञान देने की ओर समुचित कदम उठाना चाहिए।

संदर्भ

एन.सी.ई.आर.टी. 2009. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005. राष्ट्रीय फ़ोकस समूह-आधार पत्र.* 'भारतीय भाषाओं का शिक्षण'. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.

———. 2009. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005. राष्ट्रीय फ़ोकस समूह का आधार पत्र.* 'पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें'. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.

तिवारी, भोलानाथ. 2005. *भाषा विज्ञान*. किताब महल, इलाहाबाद.